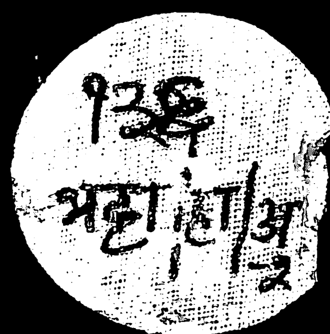




१३६

श्री विश्वेश्वरो विजयते ।

अद्वैतमतविमर्शखण्डन

[द्वितीय-प्रकाश]

अद्वैतविद्यामार्त्तण्ड विविधदुर्वादविधूननैक-
परायण वादिमण्डलमूकीभावविधानैक-
व्रतदीक्षित परमशिवभागवत श्रुति-
स्मृति-सदाचारपरिपालनैकनिबद्धादर श्री
विश्वेश्वरचरणानुध्याननिरत परम
शिवैकरसताऽऽपन्न गुरुवर्य्यमहा-
महोपाध्याय विद्यामार्तण्ड
सर्वतन्त्रस्वतन्त्रपण्डितराज

श्री ६ शिवकुमार मिश्र

शास्त्री महोदय

के

उपदिष्ट मार्ग के अनुयायी

तदीय शिष्य

काशी-मारवाड़ी संस्कृत कालेज प्रधानाध्यापक

श्री हाराणचन्द्र भट्टाचार्य्य

द्वारा

लिखित ।

विक्रम संवत् १९८९

पौष शुक्ल त्रयोदशी

सोमवार ।

श्रीविश्वेश्वरः शरणम्।

भूमिका।



श्री माध्व सम्प्रदायाचार्य्य श्री स्वामी सत्यध्यानतीर्थजी महाराज के पक्ष से पहले हमें 'अद्वैतमतविमर्श' (२ पुष्प) मिला था, जिसका खण्डन इस समय प्रकाशित किया जाता है। शास्त्रीय विषयों में हमसे मौखिक विचार करने में असमर्थ श्री स्वामीजी ने लेखबद्ध विचार में भी किस प्रकार योग्यता दिखाई है, इसका पता शास्त्र मर्म्मज्ञ सज्जनों को इस 'खण्डन' के द्वारा लग जायगा। इसलिये इस विषय में हमें कुछ कहना नहीं है। हमारे शास्त्रीय लेखबद्ध दृढ़ विचार से घबड़ाकर अब श्री स्वामीजी अज्ञ जनता के आंखों में धूल झोंकना चाहते हैं। 'अद्वैतमतविमर्श' में आदि से लेकर अन्त तक शाङ्कर मत को बौद्ध तथा अवैदिक मत कहकर श्रीशङ्कराचार्य पर आस्तिक पुरुषों की अश्रद्धा उत्पन्न करने की कुचेष्टा की गयी। अब "खण्डन" का धक्का खाकर श्रीस्वामी जी श्रीशङ्कराचार्य्य को 'वैदिक सनातन धर्म्मियों के धर्म्माचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने के लिये द्रव्य खर्च कर लेखकों की नियुक्ति द्वारा प्रयत्न कर रहे हैं। श्री शंकराचार्य्य को धर्म्माचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित करने के लिये आपकी धृष्टता को सुनकर किस को हंसी न आवेगी? आपका माध्वमत चलने के पहले ही श्रीशङ्कराचार्य अद्वितीय धर्माचार्य्य माने गये हैं। आपही के देश में धर्म्माचार्य्य की हैसियत से किसका मान अधिक है— श्रृंगेरी मठ के श्रीशङ्कराचार्य्य का या आप का? आप उनके अधीन हैं—यह रहस्यज्ञ सभी सज्जन जानते हैं। तब यह झूठी बात का क्या अवसर है? श्रीशङ्कराचार्य्य के सभी मठ में मन्दिर की प्रतिष्ठा, मूर्तिपूजा इत्यादि परम्परा से चला आता है, काशी में तथा अन्यत्र भी श्री शाङ्कर मत के अनुयायी स्मार्त्त लोग मूर्त्तिपूजा, याग यज्ञ इत्यादि शास्त्रविहित समस्त कर्म्म आजतक करते चले आरहे हैं, केवल वे आपकी तरह परस्पर द्वेष फैलाना नहीं जानते हैं, तो इस स्थिति में शाङ्करमत के प्रचार से नास्तिकता फैलने की आशङ्का कहां से आती है,—यह स्वाभाविक बुद्धि से समझना असम्भवही है। 'खण्डन' के प्रभाव से आप श्रीशङ्कराचार्य्य के भक्त बन गये, यह खण्डन की सफलता है। परन्तु अभी

तक वञ्चनाबुद्धि आपको नहीं छोड़ती है, इसकी दवाई की अन्य व्यवस्थान की जायगी।

चतुरशिरोमणि श्री स्वामीजी श्रीशङ्कराचार्य्य के ग्रन्थों से आदि तथा अन्त को छोड़कर वाक्यों को उद्धृत कर लोगों में भ्रम फैलाते हैं। श्री शङ्कराचार्य ने चतुर्थाश्रम में—संन्यासावस्था में कर्म्म तथा यज्ञोपवीतादि को विधिपूर्वक परित्याग करने के लिये उपदेश दिया है। वह भी विधि श्रुति-सिद्ध है,—बृहदारण्यक उपनिषद् के तृतीय अध्याय में यह बात स्पष्ट है। उससे पहले अन्य आश्रमों में देवपूजादि करना चाहिये उससे देवता प्रसन्न होकर ब्रह्मज्ञान के अनुकूल हो जाते हैं—यह बृहदारण्यक भाष्य-प्रथमाध्याय में श्रुति प्रमाणसे श्रीशङ्कराचार्य्य ने सिद्ध किया है। शारीरकभाष्य—तृतीयाध्याय में स्वर्गादि लोक की सत्ता तथा यज्ञादि कर्म्म की कर्त्तव्यता वेद प्रमाण सिद्ध मानी गयी है। जिस पुरुष को ब्रह्मसाक्षात्कार होनेसे सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि होगयी, उसकी दृष्टिमें ब्रह्मसे अतिरिक्त स्वर्ग, मनुष्य, नरक, पशुपक्षी इत्यादि कुछभी प्रतीत नहीं होता है। इसी ब्रह्मदर्शी-पुरुष के अभिप्रायसे स्वर्गादि का अभाव कहा है। आप यदि शांकर मत को बौद्धमत कहने का दावा रखते हैं तो पहले आपको इस बातको सिद्ध करना होगा कि, बौद्धों ने भी वैदिक देवताओं की पूजा यज्ञादि करने का उपदेश अपने शास्त्रों में दिया है। यदि यह सिद्ध करने में आप असमर्थ हैं तो काशी तीर्थ में श्रीगङ्गाजी के तट पर बैठ कर वृद्धावस्था में लोकवञ्चना तथा साम्प्रदायिक कलह फैलाकर देश का सर्वनाश करने का अधिकार आपको नहीं है। आप 'खण्डन' के धक्के से कुछ सीधे अवश्य हुए, अब श्रीशङ्कराचार्य्य को बौद्ध बनाने का हठ आपका छुट गया है, इस समय अज्ञ जनता को धोखा देकर आप शाङ्कर मत को बौद्ध मत बनाना चाहते हैं। हम जनता को चेतावनी देते हैं—वह श्रीस्वामीजी की बात पर श्रद्धा न करे, श्रीस्वामीजी धोखा देकर विपरीत समझाना चाहते हैं। शाङ्करमत हृदयग्राही और श्रुति के अनुकूल है। वैदिक विवर्त्तवाद सिद्धान्त अत्यन्त गम्भीर है। काशी के आजतक जो प्रधान पण्डित थे-परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य श्री विशुद्धानन्द सरस्वतीजी, श्रीबालशास्त्रीजी, म० म० श्री शिवकुमार शास्त्री जी, म० म० श्री गङ्गाधर शास्त्री जी, म०म० श्रीदामोदर शास्त्री जी, म० म० श्रीकैलासचन्द्रशिरोमणि जी, म० म० श्रीसुब्रह्मण्य शास्त्री जी प्रभृति विशिष्ट संन्यासी तथा विद्वान् सभी शाङ्कर मत के अनुसार स्मार्त्त

मार्ग को मानते थे। इन शिष्ट पुरुषों के शाङ्कर मत में होने के कारण शाङ्कर मत ही वैदिक सिद्ध होता है।

यदि सत् तथा असत् से भिन्न तत्त्व का प्रतिपादन करने से ही वह शास्त्र बौद्धशास्त्र होता है तो गीता भी बौद्ध शास्त्र हो जायगी। गीतामें भी कहा है—

अनादिमत् परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते।

आधुनिक धारक श्रीशङ्कराचार्य्य के सिद्धान्त के आधार पर सनातनधर्म्म का ध्वंस करना चाहते हैं, आप का यह कथन निर्मूल तथा वञ्चनामात्र है। यदि आधुनिक सुधारक शाङ्कर मत को समझ कर स्वीकार करते तो उनकी विपरीत नास्तिक बुद्धि अवश्य निवृत्त होजाती। नास्तिक्य के नाश के लिये श्रीशंकरचार्य्य का अवतार हुआ, वृद्धि के लिये नहीं हुआ। आप पहले अपनी पुस्तकमें श्रीशङ्कराचार्य्य पर अश्रद्धा उत्पन्न करने का पूर्ण प्रयत्न कर फिर इस समय श्रीशङ्कराचार्य्य पर, कृत्रिम प्रेम प्रकट करते हुए शाङ्करमत का रहस्य बताने का दावा करते हैं—इसी व्याजसे उसको बौद्धमत सिद्ध कर रहे हैं, यह आपकी एक विचित्र माया है।

हम जनता को फिर कहते हैं—श्रीशङ्कराचार्य्य वेद, स्मृति, पुराण प्रभृति शास्त्रों को अक्षर अक्षर प्रमाण मानते थे। उनका सिद्धान्त विशुद्ध वैदिक सिद्धान्त है, यह उनके समस्त ग्रन्थों से सिद्ध होता है। वैदिक सनातन धर्म्म की रक्षा के लिये भगवान् श्रीशङ्कराचार्य्य का अवतार हुआ था। उसके विरुद्ध श्रीशङ्कराचार्य्य का सिद्धान्त होना असम्भव है। इसलिये मायावी जनों के कपट वचनों से भ्रम में पड़ कर श्रीशङ्कराचार्य तथा उनके सिद्धान्त पर कोई भी अश्रद्धा न करें।



श्रीविश्वेश्वरो विजयते ।

अद्वैतमतविमर्शखण्डन

[द्वितीय प्रकाश]

[ले०-हाराणचन्द्र भट्टाचार्य्य-प्रधानाध्यापक, मारवाड़ी संस्कृत कालेज काशी]

वक्तारमासाद्य यमेव नित्या
सरस्वती स्वार्थसमन्विताऽभूत् ।
निरस्तदुस्तर्ककलङ्कपङ्का
नमामि तं शङ्करमर्चिताङ्घ्रिम् ॥ [संक्षेपशारीरक]

अवतरणिका ।

श्रीमाध्वसंप्रदायाचार्य्य स्वामी श्रीसत्यध्यान तीर्थजी महाराज ने काशीमें साम्प्रदायिक कलह फैलाने की दृढ़ प्रतिज्ञा की है, इस लिये हमारी सविनय प्रार्थना पर ध्यान न देकर आप भगवान् श्रीशङ्कराचार्य को बौद्ध सिद्ध करने के व्यर्थ प्रयास से निवृत्त नहीं होते हैं। आप जनता की दृष्टिमें धूल झोंककर बौद्ध विध्वंसी भगवान् श्रीशङ्कराचार्य्य को बौद्ध बनाना चाहते हैं। देशकी वर्त्तमान परिस्थिति में साम्प्रदायिक विवाद अत्यन्त अनुचित तथा असामयिक होने पर भी आप बाहर से आकर इस शान्तिमय शिवपुरीमें—जिस स्थानमें शैव तथा वैष्णव दोनों भगवान् श्रीविश्वेश्वरके गोदमें चिरकालसे परस्पर प्रेम पूर्वक निवास करते हैं उसी स्थानमें—शैव वैष्णवों का वृथा कलह खड़ा करना चाहते हैं। श्री स्वामीजी पण्डित कहे जाते हैं परन्तु पाण्डित्य का फल आग्रह-शून्यता आपमें होने की आशा निष्फल हो रही है।

हम अद्वैतवादियों का किसी से विरोध नहीं है, आपके द्वैतवादियोंमें ही परस्पर विरोध है। भगवान् गौड़पादाचार्य्यने कहा है-

स्वसिद्धान्तव्यवस्थासु द्वैतिनो निश्चिता दृढम् ।
परस्परं विरुद्ध्यन्ते तैरयं न विरुध्यते ॥

[माण्डूक्य कारिका ३।१७]

आप के द्वैत मतों में परस्पर विरोध है; उस पर इस समय हमें कुछ कहना नहीं है। विशेष कर, अन्यमत पर आक्षेप करना हम रुचिकर नहीं समझते हैं। आपने परम पूज्य भगवान् श्रीशङ्कराचार्यपर निर्मूल आक्षेप सूचक पुस्तक काशीमें वितरण कर हमलोगों के हृदयमें तीव्र वेदना उत्पन्न की है, इस कारण बाध्य होकर हमें पुनः पुनः आपका सुदृढ़ भ्रम हटानेके लिये लेखनी उठानी पड़ती है।

अद्वैतमत और बौद्धमतमें श्रीस्वामीजीका स्वीकृत भेद।

'अद्वैतमत विमर्श खण्डन' में अद्वैतमत तथा बौद्धमत में भेद दिखलाये गये थे, उनमें कई भेद श्रीस्वामीजी मान लिये हैं; क्योंकि, उनका खण्डन आपके नव प्रकाशित पुस्तक (अ० म० वि० द्वितीय पुष्प) में नहीं किया गया है। जो सत्य बात है, उसको मानना पड़ता है, दिन में जब श्रीसूर्य्य भगवान् प्रकाशित हैं, उस समय में कोई सूर्य्य का अपलाप करे तो वह स्वयं ही मूढ़ समझा जाता है। मैंने दिखलाया था—

(१) शाङ्करमत तथा बौद्धमतमें प्रमाण—संख्या में मत भेद है, बौद्ध दो प्रमाण (प्रत्यक्ष तथा अनुमान) मानते हैं, शाङ्करमत में छः प्रमाण (प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि) माने जाते हैं। [अद्वैतमत विमर्श खण्डन ४-५ पृ०]

(२) बौद्ध वेद का व्यावहारिक प्रामाण्य भी नहीं मानते हैं। अद्वैती वेद का प्रामाण्य मानते हैं, स्मृतिको भी प्रमाण मानते हैं। [अद्वैत विमर्श ख० ५ पृ०]

(३) बौद्धों के मतमें ज्ञान मात्र का अप्रामाण्य स्वतः है, प्रामाण्य परतः है, शाङ्करमतमें ज्ञानमात्र का प्रामाण्य स्वतः है: अप्रामाण्य परतः है। [अद्वैत विमर्श ख० ६-७ पृ०]

हमारी इन बातों का खण्डन श्रीस्वामी जी नहीं कर सके, दोनों मतों के भीतर इतना भेद उनको स्वीकार करना पड़ा। यदि मान लिया जाय कि, शाङ्कर मत तथा बौद्ध मतमें इतना ही भेद है, तथापि दोनों मत को अभिन्न कहना अज्ञता सिद्ध हुई।

अद्वैतमत के वैदिकत्व का स्वीकार।

हमने अद्वैत मत का वैदिकत्व सिद्ध किया [अद्वैतविमर्श ख०

७-८ पृ०] श्री स्वामीजी उसका खण्डन करने में असमर्थ हुए। श्री शङ्कराचार्य्य पर किये गये आक्षेपों का समाधान किया गया, 'मायावादमसच्छास्त्रम्' इत्यादि वाक्यों को अप्रमाण सिद्ध किया [अद्वैतविमर्श ख० ८—११ .पृ०] श्री स्वामी जी उसका भी उत्तर न दे सके। इस प्रकार से स्वामीजी को निरुत्तर होकर अद्वैतमत को वैदिक मत मानना पड़ा। शास्त्रकारों ने भी कहा है, अप्रतिषिद्धं परमतमनुमतं भवति।

श्रीमाध्वमत तथा नास्तिक मत में सादृश्य।

इतने पर भी श्री स्वामीजी सत्य के अपलाप तथा अज्ञता के हाथ से नहीं बच सके! आप लिखते हैं—"बौद्धो में मुख्यतः दो भेद हैं—एक शून्यवादी बौद्ध तथा दूसरे विज्ञानवादी बौद्ध।"

हमने लिखा था—"विज्ञानवादी तथा शून्यवादी के अतिरिक्त सर्वास्तित्ववादी सौत्रान्तिक तथा वैभाषिक भी बौद्ध हैं। श्रीमाध्व भी सर्वास्तित्ववादी हैं, तथा बौद्ध अहिंसा, सत्य, अस्तेय इत्यादि को धर्म्म मानते हैं, श्री माध्व भी मानते हैं। बौद्धोंसे अनेक विषयों में मतभेद होने पर भी यदि शाङ्करमत बौद्ध मत समझा जाय तो पूर्वोक्त विषयोंमें ऐक्य होने से श्री माध्वमत को बौद्धमत क्यों न समझा जाय?" (अद्वैतमतविमर्श ख० ७ पृ०)

हमारे इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ श्री स्वामी जी बाह्यार्थवादी बौद्ध सौत्रान्तिक तथा वैभाषिक की बौद्धों में गणना न कर बौद्धों के दो ही भेद मानने लगे। परन्तु श्रीस्वामी जी का कथन समस्त प्राचीन प्रामाणिक ग्रन्थों से विरुद्ध है—

"ते च माध्यमिकयोगाचारसौत्रान्तिकवैभाषिकसंज्ञाभिः प्रसिद्धा बौद्धा यथाक्रमं सर्वशून्यत्वबाह्यशून्यत्वबाह्यार्थानुमेयत्वबाह्यार्थप्रत्यक्षत्ववादानातिष्ठन्ते।"

"यद्यपि भगवान् बुद्ध एक एव बोधयिता तथाऽपि बोद्धव्यानां बुद्धि भेद चातुर्विध्यम्।"

[सर्वदर्शनसंग्रह—बौद्धदर्शन]

"माध्यमिकयोगाचारसौत्रान्तिकवैभाषिकसंज्ञाश्चतुर्विधा बौद्धाः।"

[शिवार्कमणिदीपिका २।२।१७]

"इह हि भगवता बुद्धमुनिना वैदिकमार्गविप्लावनाय चत्वारि

मतान्युत्तममध्यमाधमभेदेन प्रवर्त्तितानि + + तत्र बाह्यास्तित्ववादिनो द्विविधाः-सौत्रान्तिका वैभाषिकाश्च ।"

[अवैदिक दर्शनसंग्रह (वाणी विलास प्रेस) १-२ पृ०]

औरभी अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें सौत्रान्तिक तथा वैभाषिक बौद्धोंका विवरण है। सर्वसिद्धान्तसंग्रह (शङ्कराचार्य्य) षड्दर्शनसमुच्चय (राजशेखर) विवेक विलास, इत्यादि में भी बाह्यार्थवादी बौद्धों के मत का विवरण है।

काश्मीर के वैभाषिक मतवादी बौद्धों का 'अभिधर्म्मकोश' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, जो सर्वास्तित्ववादी बौद्धोंका प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में 'तृतीय कोषस्थान' में स्वर्गनरकादि का निरूपण किया है, इससे सिद्ध होता है कि, ये बौद्ध स्वर्ग नरकादि परलोक मानते थे, इस मत में जगत् का वैचित्र्य कर्म्म से माना गया, कायिक वाचिक मानस भेद से त्रिविध कर्म्म माना है—

कर्म्मजं लोकवैचित्र्यं चेतना तत्कृतं च तत ।
चेतना मानसं कर्म्मं तज्जे वाक्कायकर्म्मणी ॥

[अभिधर्मकोश ४ । १]

इस 'अभिधर्म्मकोश' के 'चतुर्थकोषस्थान' में पाप, पुण्य, दानधर्म्म प्रभृति का वर्णन है।

जैन भी जगत् को सत्य मानते हैं, दान, दया, परलोक आदि भी मानते हैं।

अब प्रश्न है, प्रपञ्च को अध्यस्त मानने पर शाङ्कर मतको यदि बौद्ध तथा अवैदिक समझा जाय तो प्रपञ्च को पारमार्थिक मानने वाले श्रीमाध्व का मत सर्वास्तित्ववादी बौद्धों का मत तथा जैनमत क्यों न समझा जाय ? यदि अन्य विषयों में मतभेद होने से श्रीमाध्वमत सर्वास्तित्ववादी बौद्ध तथा जैन का मत नहीं है तो प्रपञ्च को अध्यस्त मानने पर भी अनेक विषयों में मतभेद होने के कारण शाङ्करमत भी बौद्ध मत नहीं हो सकता।

बौद्ध विज्ञानवाद से अद्वैतवाद का भेद।

श्रीस्वामीजी लिखते हैं—[अद्वैतमतविमर्श २ पुष्प, ८ पृ०]

"विज्ञानवादी बौद्धों का विज्ञानवाद—
विज्ञान एक सत्य है, उस विज्ञान में समस्त जगत् कल्पित है।"
यही बात श्रीस्वामीजी 'अद्वैतमतविमर्श' के १६, १७, १८ पृष्ठों में पुनः पुनः कहे हैं। परन्तु विज्ञानवादी बौद्धों के ही ग्रन्थोंमें विज्ञान को क्षणिक तथा अनेक कहा है।

प्रसिद्ध बौद्ध दार्शनिक श्रीशान्तरक्षित के 'तत्वसंग्रह में विज्ञान के एकत्वका खण्डन है, यह पहले 'अद्वैतमत विमर्श खण्डन' (२पृ०) में दिखाया गया है। यदि विज्ञानवादी बौद्धों के सिद्धान्त में विज्ञान का एकत्व होता तो विज्ञानवादी बौद्ध श्रीशान्तरक्षित उसका खण्डन करने में क्यों प्रवृत्त होते। कोई ग्रन्थकार अपने ही सिद्धान्तको खण्डन करे यह कदापि सम्भव नहीं है। नीचे श्रीकमल शीलकी पञ्जिका-सहित तत्वसंग्रहका वचन उद्धृत किया जाता है, जिससे विज्ञानवादी बौद्ध के मत में विज्ञान का क्षणिकत्व और अनेकत्व स्पष्ट प्रतीत होगा। यह ग्रन्थ अद्वैतवादी श्रीशङ्कराचार्य्य के 'औपनिषद' मत के खण्डन के अवसर में आया है,—

'किंचास्मिन् पक्षे बन्धमोक्षव्यवस्था न प्राप्नोतीति दर्शयति-विपर्य्यस्तेत्यादि। (पञ्जिका)

विपर्य्यस्ताविपर्य्यस्तज्ञानभेदो न विद्यते।
एकज्ञानात्मके पुंसि बन्धमोक्षौ ततः कथम्॥

[तत्त्वसंग्रह ३३३]

यस्य हि प्रतिक्षणध्वंसि प्रतिपुरुषमनेकमेव विज्ञानं सन्तानभेदि प्रवर्त्तत इति पक्षस्तस्य विपर्य्यस्ताविपर्य्यस्तज्ञानप्रबन्धोत्पादवशाद्बन्धमोक्षव्यवस्था युक्तिमती। * * * यस्य तु पुनर्भवतो नित्यैकज्ञानस्वभाव आत्मेति पक्षस्तस्य कथमेकज्ञानात्मके पुंसि बन्धमोक्षौ भवतः। (पञ्जिका)

विज्ञानवादी बौद्धके ग्रन्थोंमें विज्ञानको क्षणिक तथा अनेक लिखा है, यह ऊपर उद्धृत तत्त्वसंग्रह तथा पञ्जिका से स्पष्ट होता है। श्री स्वामीजी बौद्ध ग्रन्थोंका परिशीलन न कर केवल हठसे विज्ञानवादी बौद्धके मतके विवरणमें पुनः पुनः विज्ञानको एक कहते हैं।

श्रीस्वामीजी ने लिखा है—"बौद्ध भी विज्ञान तत्त्व को नित्य

मानते हैं-ऐसा अद्वैत ग्रन्थकारों ने भी अपने अपने ग्रन्थों में कहा है।" (अद्वैतमतविमर्श १७ पृ०)

जिन ग्रन्थों के आधार पर श्रीस्वामीजी इस प्रकार लिखते हैं, उन ग्रन्थों का अभिप्राय आपने अभी तक न समझा। जब विज्ञान वादी अपने ग्रन्थों में विज्ञान को क्षणिक तथा अनेक कहते हैं तो श्रीस्वामीजी को दूसरों के अनालोचित ग्रन्थों से उनके मत को अन्यथा समझने का क्या अधिकार है! इस प्रकार से श्रीस्वामीजी ने ग्रन्थों का उत्तमरूप से परिशीलन न कर नित्य विज्ञानवादी अद्वैतियों को क्षणिक विज्ञानवादी योगाचारों मे मिला रहे हैं। क्षणिक विज्ञानवादी योगाचार बौद्ध के मत से नित्य विज्ञानवादी वेदान्ती का मत अलग है यह न्याय सिद्धान्त मुक्तावली प्रत्यक्ष खण्ड—आत्म निरूपण प्रकरण में भी स्पष्ट लिखा है, श्रीस्वामीजी के ध्यान में यह भी नहीं है और आप श्रीशंकराचार्य को बौद्ध सिद्ध करने के लिये प्रस्तुत हैं, इससे आश्चर्य क्या हो सकता है?

श्रीस्वामीजी लिखते हैं—विज्ञानवादी बौद्ध के मत में उस विज्ञान में समस्त जगत् कल्पित है (अ० म० वि० २ पुष्प ८ पृ०) इस प्रकार की उक्ति 'अद्वैतमतविमर्श' १६ वे पृष्ठमें भी मिलती है। इसी पुस्तक के १८ वें पृष्ठ में श्रीस्वामीजी लिखते हैं—'विज्ञानतत्व एक सत्य है, और समस्त जगत् मिथ्या (झूठा) है। इन मुख्य दो विषयों में अवैदिक बौद्धमत को अद्वैत मत से सादृश्य होने पर भी विज्ञानतत्व नित्य है' केवल इतनाही बौद्धमत से विशेष रहने के कारण अद्वैतवाद वैदिक किस प्रकार होगा! (अद्वैतमतविमर्श ८)

वाह रे दार्शनिकता! विज्ञान एक (?) है यह बौद्धमत है, फिर बौद्धमतमें वह एक मात्र विज्ञान भी नित्य नहीं है। आपने किस बौद्ध ग्रन्थ से ऐसा अपूर्व बौद्ध सिद्धान्त का आविष्कार किया, उसका नाम भी लिखने की कृपा करें। वाहवा पण्डिताई, क्षणिक विज्ञानवाद में भी एक ही विज्ञान! विचारशील सज्जन श्रीस्वामीजी अपूर्व दार्शनिकता को समझें—यही प्रार्थना है।

बौद्धों के ग्रन्थों को तो छोड़ दीजिये, श्रीशंकराचार्य भगवान के ग्रन्थ में भी योगाचार के मत के विवरण में विज्ञान को क्षणिक कहा है—

क्षणिका बुद्धिरेवातस्त्रिधा भ्रान्तैर्विकल्पिता।
स्वयंप्रकाशतत्वज्ञैर्मुमुक्षुभिरुपास्यते ॥

[सर्वसिद्धान्तसंग्रह—योगाचारमत—६]

शांकरमत और विज्ञानवादी बौद्धमत में तुलनात्मक समालोचना से ये भेद सिद्ध होते हैं—

बौद्ध विज्ञान को क्षणिक तथा अनेक मानते हैं।

श्रीशंकराचार्य्य विज्ञान (ब्रह्म) को एक व्यापक तथा नित्य मानते हैं। बौद्धमत में आलयविज्ञान सन्तान (आत्मा) अनन्त है, उनमें एकही सन्तान में अनन्तकोटि सन्तानी विज्ञान होते हैं। श्रीशंकराचार्य्य के मत में एक मात्र नित्य अखण्डविज्ञानरूपी ब्रह्म विराजमान माने जाते हैं। आत्मा का भेद इस मत में वास्तविक नहीं है। बौद्धमत तथा शांकरमत दोनों मतों में निखिल प्रपञ्च विज्ञान में कल्पित होने पर भी श्रीशंकराचार्य के मत में एकही नित्य विज्ञान सारी कल्पना का अधिष्ठान है,—एकही नित्य ज्ञानरूपी ब्रह्म में समग्र जगत् कल्पित है, बौद्धविज्ञानवादियों के मत में अनन्तकोटि विज्ञान का प्रत्येक विज्ञान व्यक्ति प्रपञ्च कल्पना का अधिष्ठान है—जिनको प्रपञ्च की प्रतीति होती है, उनके आलय विज्ञान सन्तानके अन्तर्गत प्रत्येक विज्ञान में प्रपञ्च कल्पित मानना पड़ता है, बौद्धमत में प्रत्येक विज्ञान सन्तान अलग अलग है, और सन्तानी से अतिरिक्त सन्तान नहीं है। इस प्रकार अद्वैत मत से विज्ञानवादी बौद्ध मत अत्यन्त भिन्न सिद्ध होता है। श्री स्वामीजी की दार्शनिक अज्ञता जिस प्रकार अपार है, उसी प्रकार दार्शनिक सूक्ष्म विचार दृष्टि का भी अत्यन्त अभाव है। इसलिये विषय को बिलकुल स्पर्श न कर श्री स्वामी जी अद्वैत मत को विज्ञानवादी बौद्धों का मत कहने में तनिक भी संकुचित न हुए, यह खेद की बात है।

श्री स्वामीजी को लौकिक वाक्यों के तात्पर्य का अवधारण करने में भी सामर्थ्य नहीं है। हमने बौद्ध मत तथा शाङ्करमत में भेद दिखाया [अद्वैतमतविमर्शखण्डन २-३ पृ०] स्वामीजी ने उसका

अभिप्राय न समझ कर 'स्वव्याहति' दोष का उद्भावन किया। जब आप हम जैसे लौकिक पुरुषों के वाक्य के भी तात्पर्य का अवधारण नहीं कर सकते तो अतिगम्भीर शाङ्करभाष्य, भामती, अद्वैतसिद्धि, लघुचन्द्रिका प्रभृति ग्रन्थोंके तात्पर्य्यावधारण की दुराशा आपसे करना बिल्कुल व्यर्थ ही है। श्री स्वामी जी का अद्वैत सिद्धान्तरहस्य समझाने के लिये लिखना पड़ता है—

चोद्यं वा परिहारो वा क्रियतां द्वैतभाषया।
अद्वैतभाषया चोद्यं नास्ति नाऽपि तदुत्तरम्॥

[पञ्चदशी २। ३६]

आप द्वैतवादियों के प्रश्नों के उत्तर देने के लिये हमें आपके मार्ग का अवलम्बन करना पड़ता है। अद्वैतवादियों के मत में भेद पदार्थ ही सिद्ध नहीं होता है—यह आपको अवश्य ज्ञात होता—यदि आप कृपाकर खण्डनखण्डखाद्य, अद्वैतसिद्धि प्रभृति ग्रन्थों में परिश्रम करते।

श्री स्वामी जी ने श्री शंकराचार्य्य के 'सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह' से

जीवन्मुक्तिपदं हित्वा स्वदेहे कालसात्कृते।
विशत्यदेहमुक्तित्वं पवनोऽस्पन्दतामिव॥
ततस्तत्संबभूवासौ यद्गिरामप्यगोचरम्।
यच्छून्यवादिनां शून्यं ब्रह्म ब्रह्मविदां च यत्॥
विज्ञानं विज्ञानविदां........तत्तत्वं तदसौ स्थितः।

इन वाक्यों का उद्धरण किया और इस पर टिप्पणी करते करते हुए कहा—"इससे स्पष्ट होगया कि शून्य और ब्रह्म का स्वरूप एक ही है।" "इन वाक्यों से बौद्ध विज्ञान तथा अद्वैतब्रह्म में भेद नहीं है, ऐसा सिद्ध होता है।"

श्रीस्वामीजी की दार्शनिकता जैसी अपूर्व है, आप की सत्यनिष्ठा उससे भी बढ़ी चढ़ी है। जिस वाक्य का उद्धरण आपने

किया है, वह सम्पूर्ण वाक्य नीचे उद्धृत किया जाता है। श्री-स्वामीजी लोगों में भ्रम फैलाने के लिये इस वाक्य का कुछ अंश छोड़ दिये हैं—

जीवन्मुक्तिपदं त्यक्त्वा स्वदेहे कालसात्कृते।
विशत्यदेहमुक्तित्वं पवनोऽस्पन्दतामिव॥
ततस्तत्संबभूवासौ यद्गिरामप्यगोचरम्।
यच्छून्यवादिनां शून्यं ब्रह्म ब्रह्मविदां च यत्॥
विज्ञानं विज्ञानविदां मलानाञ्च मलात्मकम्।
पुरुषः सांख्यदृष्टीनामीश्वरो योगवादिनाम्॥
शिवः शैवागमस्थानां कालः कालैकवादिनाम्।
यत्सर्वशास्त्रसिद्धान्तं यत्सर्वहृदयानुगम्।
यत्सर्वं सर्वगं वस्तु तत्तत्त्वं तदसौ स्थितः॥

[६७९—६८२)

श्रीशङ्कराचार्य्य के ग्रन्थों की समालोचना करते हुए हम इस वाक्य का श्रीशङ्कराचार्य्य-सम्मत अर्थ पाठकों के सम्मुख रखते हैं—

श्रीशङ्कराचार्य्य ने शून्यवादी के मतको सर्व प्रमाणों से विरुद्ध कहा है—

"शून्यवादिपक्षस्तु, सर्वप्रमाणविप्रतिषिद्धः" (शाङ्करभाष्य २।२।३१)।

बौद्ध सिद्धान्तों को परस्पर विरुद्ध होने से सर्वथा अनादरणीय कहा है—

"अपि च बाह्यार्थविज्ञानशून्यवादत्रयमितरेतरविरुद्धमुपदिशता सुगतेन स्पष्टीकृतमात्मनोऽसंबद्धप्रलापित्वं प्रद्वेषो वा प्रजासु × × × सर्वथाऽनादरणीयोऽयं सुगतसमयः श्रेयस्कामैः।"
(शाङ्करभाष्य २।२।३१)

उन्हीं श्रीशङ्कराचार्य्य के लिये विज्ञानवादी बौद्धों के विज्ञान

तथा शून्यवादी बौद्धों के शून्य को ब्रह्म मानना, कहां तक सम्भव है, यह बुद्धिमानों को विचार करना चाहिये।

श्रीस्वामीजी के उद्धृत वाक्यसे यदि ब्रह्म शून्य तथा विज्ञान स्वरूप सिद्ध होता है तो मल, पुरुष, ईश्वर, शिव तथा काल स्वरूप भी सिद्ध होता है। शून्यवादियों का शून्य तथा विज्ञानवादियों का विज्ञान मल, पुरुष, ईश्वर, शिव तथा कालस्वरूप न होने से शांकर अद्वैतसिद्धान्त बौद्ध मत से भिन्न है। शून्यवादी शून्य को तथा विज्ञानवादी विज्ञान को मल, पुरुष, ईश्वर, शिव तथा काल-स्वरूप मानते हैं, जब तक यह प्रमाण से सिद्ध नहीं किया जाय, तब तक शांकर मत को शून्यवाद तथा बौद्ध विज्ञानवाद के साथ अभिन्न कहना भयङ्कर अज्ञता है।

इस वाक्य का वास्तव में वह अर्थ नहीं है, जो आप श्रीशंकरा-चार्य्य के ग्रन्थ गुरुमुख से अध्ययन न करने से अपने मन से समझते हैं। आप यदि जिज्ञासाधिकरण [ब्रह्मसूत्र १।१।१] के भाष्य पर ध्यान देते तो यह भ्रम आप को न होता—

देहमात्रं चैतन्यविशिष्टमात्मेति प्राकृता जना लोकायतिकाश्च प्रतिपन्नाः। इन्द्रियाण्येव चेतनान्यात्मेत्यपरे। मन इत्यन्ये। विज्ञानमात्रं क्षणिकमित्येके। शून्यमित्यपरे। अस्ति देहादिव्यतिरिक्तः संसारी कर्त्ता भोक्तेत्यपरे। भोक्तैव केवलं न कर्त्तेत्येके। अस्ति तद्व्यतिरिक्त ईश्वरः सर्वज्ञः सर्वशक्तिरिति केचित्। आत्मा स भोक्तुरित्यपरे। एवं बहवो विप्रतिपन्ना युक्तिवाक्यतदाभाससमाश्रयाः सन्तः।

इस उद्धृत भाष्यांश से स्पष्ट ज्ञात होता है, एक ही ब्रह्म वस्तु भिन्न भिन्न वादियों ने भिन्न २ प्रकार से समझी है, परन्तु सभी वादियोंकी समझ इस विषयमें ठीक नहीं हो सकती है। यही विषय माण्डूक्यकारिका (२।१६-२९) में स्पष्ट है। इन वादियों की विप्रति पत्तियोंके खण्डन के लिये श्रीव्यासदेव ब्रह्मसूत्रों का प्रणयन किये हैं, यह श्रीशंकराचार्य्य का कथन है। क्षणिक विज्ञानवाद तथा शून्यवाद अद्वैत ब्रह्मवाद में पूर्व पक्ष है, सिद्धान्त नहीं है, यह पूर्व प्रदर्शित भाष्य से स्पष्ट प्रतीत होता है। अब सर्व वेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह

के उद्धृत वाक्य का अर्थ सरल होगया, भिन्न भिन्न वादियों की दृष्टि में जो ब्रह्म वस्तु भिन्न भिन्न रूपसे प्रतिभात है, सर्व शास्त्र सिद्धान्तभूत सर्वान्तर्यामी सर्वव्यापी सर्वस्वरूप उस ब्रह्म वस्तुमें देहनाश के साथही साथ वह ज्ञानो विलीन हो जाता है, यही उक्त वाक्य का सहज सरल यथार्थ अर्थ है। अद्वैत ब्रह्म सर्वशास्त्र-सिद्धान्त है, यह श्रीमधुसूदन सरस्वतीजोने 'प्रस्थानभेद' में सिद्ध किया है। बौद्ध सम्मत क्षणिक विज्ञान तथा शून्य अद्वैतवादियों के सिद्धान्तानुसार शशशृङ्गवत अलीक पदार्थ हैं। उस विज्ञान तथा शून्य को अद्वैतवादी का ब्रह्म समझना, बिलकुल, गाढ़ी अज्ञता है। आपने लिखा है [अद्वैतमत विमर्श २१ पृ०] विज्ञानवादी बौद्ध के मत को खण्डन कर श्रीशंकराचार्य्य ने 'अद्वैतमत प्रमाणों से विरुद्ध है' यही प्रकारान्तर से सिद्ध किया है। आपसे प्रार्थना है, शीघ्रता न कीजिये, पहले बौद्ध मत तथा शांकरमत का अध्ययन और मनन उत्तम रूप से कीजिये, अद्वैतसिद्धि प्रथम परिच्छेद में बौद्ध मत खण्डन का अभिप्राय स्पष्ट है।

शून्यवाद से अद्वैतवाद का भेद।

हम पुनः पुनः कहते हैं, श्रीस्वामीजी बौद्ध ग्रन्थों से-बौद्ध मतों से परिचित नहीं हैं ऐसा होने पर भी वे अपनी अज्ञता दूसरों के शिर पर मढ़ना चाहते हैं:—दुसरों को अज्ञ बनाना चाहते हैं। श्रीशंकराचार्य्य से प्राचीन किसी बौद्ध ग्रन्थमें शून्यको ज्ञानस्वरूप माना है, यह सिद्ध करना श्रीस्वामीजी के लिये अत्यन्त असम्भव है। शून्यवाद के प्रामाणिक प्राचीन ग्रन्थ 'माध्यमिकावृत्ति' में विज्ञान को कल्पित कहा है। इस विषय के प्रमाणरूप से 'सर्वनिकायशास्त्र-सूत्र' का वाक्य उद्धृत किया है—

मायोपमं च विज्ञानमुक्तमादित्यबन्धुना।

(आदित्यबन्धुना = बुद्धेन)

श्री शंकराचार्य्य के ' सर्वसिद्धान्तसंग्रह ' में भी कहा है—
माध्यमिक बुद्धि की सत्ता भी नहीं मानते हैं—

नास्ति बुद्धिरपीत्याह वादी माध्यमिकः किल।

(सर्वसिद्धान्तसंग्रह—माध्यमिकमत—६)

शांकरभाष्य (२।२।३१) में शून्यवादको सर्वप्रमाण विरुद्ध कहकर उसके खण्डन में उपेक्षा की, यदि शून्यमत श्रीशंकराचार्य्य का सम्मत होता तो उसको सर्व-प्रमाण विरुद्ध कहने का क्या अवसर था? इससे स्पष्ट प्रतीत होता है—शून्यवाद श्री शंकराचार्य्य के सम्मत नहीं हैं।

यद्यपि प्राचीन ग्रन्थों में शून्य को ज्ञानरूप नहीं माना है, तथापि श्री शंकराचार्य्य के परवर्ती कुछ ग्रन्थों में शून्य को ज्ञानरूप तथा कहीं आनन्द रूप भी कहा है। यह बौद्ध विध्वंसी भगवान श्री शंकराचार्य के प्रभाव का फल है। उन्हीं के प्रभाव में आकर बौद्ध भी कुछ अंश में उनके सिद्धान्त को स्वीकार करने के लिये बाध्य हुए।

केवलां संविदं स्वच्छां मन्यन्ते मध्यमाः पुनः।

जैन ग्रन्थ विवेक विलास की इस कारिका में शून्य को ज्ञानरूप कहा है। जैन श्रीराजशेखरसूरिप्रणीत 'षड्दर्शनसमुचय' में भी शून्य को ज्ञानस्वरूप लिखा है—

मन्यन्ते बत मध्यमाः कृतधियः स्वच्छां परां संविदम्।४५

अद्वैतवादी अद्वैत सिद्धिकार की उद्धृत पंक्ति से शून्यवादी का शून्य ज्ञान तथा आनन्दरूप प्रतीत होता है—

शून्यवादिभिरपि सत्त्वरहितज्ञानानन्दात्मकत्वस्य ब्रह्मणोऽन्यत्राङ्गीकारात्।

इन नवीन ग्रन्थों में शून्य को ज्ञान तथा आनन्द रूप कहने पर भी शून्य मत तथा अद्वैतमत का ऐक्य नहीं सिद्ध हो सकता है। शून्य यदि ज्ञान तथा आनन्दस्वरूप है, तोभी वह सत् नहीं है। शून्य को अद्वैतसिद्धि की ऊपर उद्धृत पंक्ति में **सत्त्वरहित** ज्ञान तथा आनन्दस्वरूप कहा गया है। अद्वैतवादी का ब्रह्म सत् है, शून्य सत् नहीं है। शून्यवादी शून्य में स्वरूपसत्ता अथवा अतिरिक्त सत्ता दोनों नहीं

मानते हैं। अत एव—अद्वैतसिद्धि—प्रथमपरिच्छेद—द्वितीय मिथ्यात्वनिरुक्ति में कहा है—शून्यवादी सदधिष्ठानकभ्रम नहीं मानते हैं। उनके मत में भ्रम का अधिष्ठान शून्य है, वह सत् नहीं है। अद्वैतवादी ब्रह्म को सत् मानते हैं। उनके मत में समस्त कल्पनाका अधिष्ठान सत्स्वरूप ब्रह्म है, इससे वे सदधिष्ठानक भ्रम को मानते हैं। शन्यवादी के मत में शून्य सत् नहीं है, अद्वैतसिद्धान्त में ब्रह्म सत् है, अद्वैतसिद्धिकार ने पुनः पुनः इसका निरूपण किया है। श्रीस्वामीजी यदि व्यर्थ कलह छोड़ कर ध्यान से गौड़ ब्रह्मानन्दी-सहित अद्वैत-सिद्धि का परिशीलन करें तो उनके समस्त भ्रम दूर हो जायेंगे। सिद्धान्तों में अंश विशेष समान होने पर भी एक मत अन्य मत नहीं होता है—खण्डन-विद्यासागरी की यह बात आपको ज्ञात नहीं है।

श्रीगौड़पादाचार्य्य की कारिका तथा उसके शांकरभाष्य का उपक्रम उपसंहार न समझकर श्रीस्वामीजी ने हमारी अज्ञता के लिये खेद प्रगट किया। आप शांकरभाष्य के 'चतुष्कोटिविनिर्मुक्त' शब्द के ऐक्य से भ्रम के गहरे कूप में पड़े हैं, अर्थ का विचार नहीं किया। यदि श्रीस्वामीजी श्रीशंकराचार्य्य के ग्रन्थों का मनन उत्तम रूप से करते तो भ्रम के चक्कर में न आते, और उनके भ्रम को हटाने के लिये व्यर्थ परिश्रम नहीं उठाना पड़ता। आशा है, श्रीस्वामीजी इस लेख को पढ़कर अपनी अज्ञता के लिये अवश्य पश्चात्ताप करेंगे। श्रीशंकराचार्य्य ने ब्रह्म को सत् मानते हुए शून्य को 'चतुष्कोटिविनिर्मुक्त' कहा है—

न सन्नासन्न सदसन्न चोभाभ्यां विलक्षणम्।
चतुष्कोटिविनिर्म्मुक्तं तत्त्वं माध्यमिका विदुः ॥७॥

* * * * *

चतुष्कोटिविनिर्म्मुक्तं शून्यं तत्त्वमिति स्थितम् ॥१०॥
[सर्वसिद्धान्तसंग्रह—माध्यमिकमत]

ब्रह्मसूत्र भाष्य (२। २। ३१) में आचार्य्य श्रीशंकर भगवान् ने स्वयं शून्यवाद को सर्व प्रमाणों से विरुद्ध बतलाया है। वे ही श्री शंकराचार्य्य माण्डूक्यकारिका के भाष्य में शून्यवाद को स्वीकार किये हैं—यह कल्पना सहज बुद्धि से नहीं हो सकती। इस लिये

हम श्रीस्वामीजी से सविनय प्रार्थना करते हैं—आप फिर से उक्त कारिका तथा भाष्य का विचार करें, साथ साथ आनन्दगिरि की टीका पर भी ध्यान से विचार करें। यह भी ध्यान में रहे, माण्डूक्य का० (४ । ८४) के भाष्य के 'चतुष्कोटिविनिर्मुक्त' शब्द का जो अर्थ है, मा० का० (४ । १००) के भाष्य के 'चतुष्कोटिवर्जित' शब्द का वही अर्थ है।

अस्ति नास्त्यस्ति नास्तीति नास्ति नास्तीति वा पुनः ।
चलस्थिरोभयाभावैरावृणोत्येव बालिशः ॥ [४ । ८३]

इन चार पक्षों में 'अस्ति' यह प्रथम पक्ष वैशेषिकादि का है, वे शरीरादि से अतिरिक्त आत्मा मानते हैं। देहादि से अतिरिक्त होने पर भी बुद्धि से अतिरिक्त आत्मा नहीं है, क्षणिक विज्ञान ही आत्मा है, यह द्वितीय पक्ष विज्ञानवादी बौद्ध का है। 'अस्ति नास्ति' यह तृतीय पक्ष स्याद्वादी जैनियों का है, वे समस्त पदार्थों में 'सप्तभङ्गीन्याय' का प्रयोग करते हैं, इस लिये उन के मत में आत्मा 'अस्ति नास्ति' उभयरूप है। 'नास्ति नास्ति' यह चौथा पक्ष शून्यवादी का है, शून्य की आत्यन्तिकता सूचित करने के लिये दो बार 'नास्ति नास्ति' कहा गया है। शांकर भाष्य तथा आनन्द गिरि की टीका के अनुसार इस कारिका का यही अभिप्राय है। आत्मा इन चार कोटियों से रहित है—

कोट्यश्चतस्र एतास्तु ग्रहैर्यासां सदाऽऽवृतः ।
भगवानाभिरस्पृष्टो येन दृष्टः स सर्वदृक् ॥ [४। ८४]

यहां आनन्द गिरि ने भाष्य सहित कारिका का तात्पर्य इस प्रकार वर्णन किया है—

"आत्मा हि वस्तुतोऽस्तीत्यादिकल्पना रहितो येनोपनिषत्प्रवणेन प्रतिपन्नः स सर्वज्ञो ज्ञातव्यान्तरमपश्यन् परमार्थपण्डितो निराकाङ्क्षो भवतीत्यर्थः।"

पूर्व कारिका के भाष्य से मिलाकर इस कारिका का तात्पर्य, भाष्य तथा आनन्दगिरि की भाष्यव्याख्या के अनुसार यह सिद्ध होता है, आत्मा के विषय में भिन्न भिन्न चार प्रधान वादी भिन्न २

विचार करते हैं वे विचार उनके अपनी अपनी कल्पना मात्र है, आत्मा इन चारों कल्पनाओंसे अतीत है। जिसने उपनिषत् के परिशीलन से इस आत्मा को ठीक ठीक (इन कल्पनाओं से रहित) जाना, वही वास्तविक पण्डित है।

हम इस विषय में अधिक लिखना अनावश्यक समझते हैं। माण्डूक्यकारिका, भाष्य तथा आनन्द गिरि की टीका सहित सुलभ है, जो समझदार हैं, वे मिलाकर देखें—अज्ञता किसकी है, श्रीशङ्कर विद्वेषी का अथवा श्रीशङ्कर के भक्त का? खेद की बात है, काशी जैसे पण्डितों के स्थान में भी श्रीस्वामीजी दिन में आंखों में धूल झोंकना चाहते हैं। जिस कारिका में शून्यवादी के सिद्धान्त की अवहेलना की गयी, आप उसीमें शून्यवादीके मत को माना है-ऐसा कहते हैं; और उसी कारिका के आधार पर श्रीगौड़-पादाचार्य्य तथा श्रीशङ्कराचार्य्य को शून्यवादी बौद्ध सिद्ध करने का दावा करते हैं। किमाश्चर्य्यमतः परम्! इन दो कारिकाओं के साथ पूर्वोक्त 'सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह' के वाक्य को मिलाकर पढ़नेसे उसके अर्थ में भी सन्देह नहीं रहता है। आपने आचार्य भगवान् श्रीशङ्करको शून्यवादी बनानेके लिये एक पद्यांश लिखा है:-

न सच्चाहं न चासच्च नोभयं केवलः शिवः।

इससे अद्वैतियों का ब्रह्म 'चतुष्कोटिविनिर्मुक्त' किस प्रकार से सिद्ध हुआ—यह केवल श्री स्वामीजी ही समझ सकते हैं। इस से सत्ता, असत्ता तथा सदसद् उभयरूपता—इन तीन धर्मों का आत्मा (ब्रह्म) में निषेध प्रतीत होता है। ब्रह्म-सत्ता ब्रह्म स्वरूप है, (अद्वैतमतविमर्शखण्डन ४ पृ०) इसलिये सत्तारूप अतिरिक्त धर्म्म का ब्रह्म में निषेध किया गया है। ब्रह्म में सत्तादि धर्म्म मानने पर द्वैत की आपत्ति होगी—अद्वैतवादियों का अपसिद्धान्त होगा। स्वरूप सत्तासे अद्वैतियोंका ब्रह्म सत् है, शून्यसे विलक्षण है, ब्रह्म के ऊपर सत्ता रूप अतिरिक्त धर्म्म मानने पर अनवस्था होगी [खण्डन खण्ड खाद्य-प्रथम परिच्छेद]। सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म (तै० २।१) यह श्रुति ब्रह्म की सत्ता में प्रमाण होती हुई भी 'नेह नानाऽस्ति

किञ्चन' 'स एष नेति नेत्यात्मा' इन श्रुतियों की एकवाक्यता से ब्रह्म की स्वरूप सत्ता का ही बोधन करती है।

उपसंहार।

प्रभाकर के मत में भूतल में जो घटाभाव है, वह भूतलस्वरूप होने पर भी भूतल की असत्ता=शून्यता नहीं मानी जाती है। वहाँ भूतलरूप भाव पदार्थ अभावरूप से प्रतीत मात्र होता है। सत्स्वरूप ब्रह्म में जो प्रपञ्चाभाव है, वह ब्रह्मस्वरूप होने पर भी उससे ब्रह्मको शून्य क्यों माना जायगा—यह श्री स्वामीजी को छोड़ कर दूसरों की बुद्धि में आना असम्भवही है। ब्रह्मविद्याभरण जिस प्रकार आप समझे हैं, हमारा कथन भी उसी प्रकार समझते हैं। जो न समझें, उनको समझाना अशक्य है। आप के हृदय में परमपूज्य भगवान् श्रीशङ्कराचार्य पर घोर विद्वेष है, आपकी द्वेष-बुद्धि का प्रधान प्रमाण यह है,—श्रीशङ्कराचार्य्य प्रपञ्च के विषय में 'अनिर्वचनीय' अर्थ में 'मिथ्या' शब्द का प्रयोग किये हैं, आप उसका अनुवाद जानबूझ कर 'झूठा' करते हैं। आचार्य श्रीशङ्कर ने तो जगत् के विषय में अलीक अर्थ में 'मिथ्या' शब्द का प्रयोग कहीं नहीं किया तो आप उसका अनुवाद 'झूठा' क्यों करते हैं?

जो परलोक की पारमार्थिक सत्ता मानते हैं, आप उसी को 'आस्तिक' कहते हैं। [अद्वैतमतविमर्श १८ पृ०] आपके कथनानुसार 'वैभाषिक' बौद्ध भी 'आस्तिक' हैं। उनके ग्रन्थ 'अभिधर्म्मकोश' में परलोक माना है। जैन भी आस्तिक हैं, उनके 'सम्मतितर्क' ग्रन्थ के प्रथम प्रकरण में ही परलोक सिद्ध किया है। परन्तु वैदिक मार्ग के अनुसारी कोई भी ग्रन्थकार इनको 'आस्तिक' नहीं मानते हैं। 'नास्तिको वेदनिन्दकः' इस मनुवाक्य के अनुसार इनको नास्तिक ही समझते हैं। इसलिये आप की 'आस्तिक' शब्द की व्युत्पत्ति, मनुवचन माननेवाले आस्तिकों के सम्मत नहीं है। उन्होंने व्याकरण से मनुस्मृति को प्रबल माना है।

हमने भस्म तथा रुद्राक्ष धारण का जो वैदिक प्रमाण उपस्थित किया है, श्री स्वामीजी उसके खण्डन में असमर्थ हुए। इसलिये वे

भस्म रुद्राक्ष धारण के वैदिकत्व का खण्डन फिर नहीं करेंगे, यह आशा अद्वैतवादी कर सकते हैं।

ब्रह्मसूत्रों का तात्पर्य अद्वैत में ही है—यह 'व्यासतात्पर्यनिर्णय' (वाणी विलास प्रेस) ग्रन्थ में अच्छी तरह से सिद्ध किया है। श्रुति का अद्वैत में ही तात्पर्य है, अद्वैतसिद्धि तथा गौड़ ब्रह्मानन्दी आदि ग्रन्थों में इसका भी प्रचुर प्रतिपादन है, हमने भी 'अद्वैतमतविमर्श खण्डन' प्रथम प्रकाश में इसका निरूपण किया है। गीताका तात्पर्य अद्वैत में है, यह भी आप को शाङ्कर भाष्य से प्रतीत होगा। आप यदि श्रीमधुसूदनसरस्वतीजी की 'गीतागूढ़ार्थदीपिका' ध्यान से पढ़ते तो, आप को गीता का तात्पर्य अद्वैत में है यह निश्चय हो जाता। गीता स्वयं कहती है—

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

इसके बाद भी यदि किसी के मन में हो कि, गीता का तात्पर्य अद्वैत में नहीं है, तो उनके लिये गुरु सेवा ही परम कर्त्तव्य होगी। अभीतक गीता का सच्चा तात्पर्य आपको ज्ञात न होने से आप उस का विपरीत अर्थ समझते हैं। श्रुति, व्यास सूत्र तथा गीता में, द्वैत पक्ष में ही ताना खींचा करना पड़ता है।

अतः पर आपकी वञ्चनापूर्ण व्यर्थ बातों का उत्तर देने में समय का अपव्यय नहीं किया जायगा। यदि आपको अद्वैतमतको समझना हो तो अद्वैतवाद के ग्रन्थों का परिशीलन करें। आपकी द्वेषबुद्धि से अद्वैतवाद की कुछभी हानि न होगी। अद्वैतमत आपके मतों से अर्वाचीन नहीं है। आपही जनता में व्यर्थ भ्रम फैलाकर विद्वानों की दृष्टि में अपनी घोर अज्ञता तथा मायाविता को प्रमाणित कर रहे हैं, अब ग्रन्थों के अंशों को उड़ाकर उद्धृत करते हुए जनता को धोखा देकर झूँठा विजय प्राप्त करना चाहते हैं। वञ्चना में पटुता न होने के कारण हमें इस विषय में उपेक्षा करनी होगी। शास्त्रों का विचार अब समाप्त होगया। श्री स्वामी जी वञ्चना के मार्गपर चलते हैं इसलिये भविष्य में हम उनकी वञ्चना का उत्तर नहीं देंगे।

आपसे हम फिरभी सविनय प्रार्थना करते हैं,—भारतभूमि इस समय अन्तः कलह के कारण नष्ट भ्रष्ट हो रही है,—एक ओर हिन्दू मुसलमान लड़ते हैं,—दूसरी ओर सुधारक तथा प्राचीन सिद्धान्त मानने वालों का कलह प्रारम्भ होगया। इस दुर्दिन में इस शान्तिमय शिवपुरी में स्मार्त्त वैष्णवों के एक नवीन कलह का उद्भावन करना कदापि उचित नहीं है। आप प्रेमपूर्वक अपनी श्रद्धा के अनुसार श्रीभगवान् का भजन पूजन करें, उसमें किसो अद्वैतवादी का विरोध नहीं है। अद्वैतवादी अच्छी तरह से जानते हैं—

स्वसिद्धान्तव्यवस्थासु द्वैतिनो निश्चिता दृढम् ।
परस्परं विरुध्यन्ते तैरयं न विरुध्यते ॥

[माण्डूक्यकारिका ३ । १७]

आप पहले अन्य सम्प्रदायों के वैष्णवों को अपने सिद्धान्तों को मनावें, जिस श्रीचैतन्य सम्प्रदायको अपना अङ्ग समझते हैं, उसको अपने सिद्धान्तों को स्वीकार करावें, उसके बाद अद्वैतियों से वाद विवाद करें।

आपने 'अद्वैतमतविमर्श' में परमपूज्य भगवान् श्रीशङ्कराचार्य्य के प्रति तीव्र आक्षेप किया, अद्वैत मत को बौद्ध मत तथा अवैदिक मत कहा, भस्मादि धारण को वेदनिन्दित बताया, हम अद्वैतमत के अनुयायियों को असुर बताया, इसलिये हमें इतना लिखना पड़ा।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।



श्रीविश्वेश्वरो विजयते।

घोषणा ।

(द्वितीयावृत्ति)

१०००) मुद्रा-पारितोषिक ।

श्रीमाध्वसंप्रदायाचार्य्य स्वामी श्री सत्यध्यान तीर्थजी महाराज ने 'अद्वैतमतविमर्श' नामक पुस्तक इस शिवपुरी में वितरण किया । इस पुस्तक के ११ वें पृष्ठ में भस्मादिधारण वेदनिन्दित है—ऐसा लिखा है, इस पुस्तक में परमपूज्य भगवान् श्रीशंकराचार्य्य पर तीव्र आक्षेप किया गया है और उनके अद्वैतमत को बौद्ध तथा अवैदिक मत कहा है । इस प्रकार से शान्तिमय शिवपुरी में अशान्ति का बीजारोपण कर दिया गया ।

मैंने केवल अपने सिद्धान्त की रक्षा के लिये 'अद्वैतमतविमर्श-खण्डन' नाम से इस पुस्तक का खण्डन प्रकाशित किया, जिसमें किसी मत पर आक्षेप न करते हुए श्रीस्वामीजी की बौद्ध तथा शांकर दोनों मतों में अज्ञता प्रमाणित की । इस खण्डन का उत्तर देने में असमर्थ श्रीस्वामीजी के पक्ष के कुछ पण्डितों के हस्ताक्षर से मुझ पर व्यक्तिगत मिथ्या आक्षेपसूचक एक विज्ञापन प्रकाशित किया गया है ।

यदि श्रीस्वामीजी अथवा उनके पक्ष के कोई पण्डित शाङ्कर-मत को बौद्ध तथा अवैदिकमत सिद्ध कर सकें तो मैं उनको १०००) मुद्रा पारितोषिक दूंगा और स्वयं शङ्ख चक्र धारण कर माध्वमत को स्वीकार करूंगा । श्रीस्वामीजी अथवा उनके पक्ष के कोई पण्डित मेरे पुस्तक का ठीक ठीक खण्डन लिखें—जिसको उभयपक्षसम्मत मध्यस्थ के सन्मुख रखकर निर्णय किया जायगा । यदि श्रीस्वामीजी इसमें असमर्थ हों तो देश की इस भयङ्कर दुर्दशा के समय में—जिस समय सारा देश ऐक्य में दृढ़बद्ध हो रहा है, उस समय में—साम्प्रदायिक कलह न फैलाकर काशी से प्रस्थान करने की कृपा करें—यही सविनय प्रार्थना है ।

३०-१२-३२ हाराणचन्द्र भट्टाचार्य्य ।

विशेष सूचना।

'अद्वैतमतविमर्शखण्डन' प्रथम तथा द्वितीय प्रकाश प्रकाशित किया है। इससे अद्वैतमत का वैदिकत्व तथा बौद्ध मत से उसका भेद स्पष्ट होगया। इसीसे विचारशील सज्जनों की दृष्टि में सच्ची बात खुल जायगी। अब इस विषय में कुछ भी लिखना अनावश्यक है।

ायने '
त तीव्र आक्षेप
हा, भस्मादि
ायियों को



अर्जुन प्रेस, कबीरचौरा, काशी में मुद्रित।

रात

